ISSN 2277-5897 SABLOG
PEER REVIEWED JOURNAL

लोक चेतना का राष्ट्रीय मासिक

139

सबलोग

मई-जून 2025 (संयुक्तांक) • ₹ 50

ग्रामीण विकास में नये प्रयोग

- साहित्य में अश्लीलता परोसने की विकृति
- बलूचिस्तान में आजादी का संघर्ष
- पश्चिम बंगाल, कॉंग्रेस और मुसलमान बुद्धिजीवी

सबलोग-139

वर्ष 16, अंक 5, मई-जून 2025 (संयुक्तांक)

ISSN 2277-5897 SABLOG
PEER REVIEWED JOURNAL
www.sablog.in

सम्पादक
किशन कालजयी

संयुक्त सम्पादक
प्रकाश देवकुलिश
राजन अग्रवाल

उप-सम्पादक
गुलशन चौधरी

ब्यूरो
उत्तर प्रदेश : शिवाशंकर पाण्डेय
बिहार : कुमार कृष्णन
झारखण्ड : विवेक आर्यन

समीक्षा समिति (Peer Review Committee)
आनन्द कुमार
रत्नेश्वर मिश्र
मणीन्द्र नाथ ठाकुर
मंजु रानी सिंह
सफदर इमाम कादरी
प्रमोद मीणा
राजेन्द्र रवि
मधुरेश
महादेव टोप्पो
विजय कुमार
आशा
सन्तोष कुमार शुक्ल
अखलाक 'आहन'
अभय सागर मिंज

सम्पादकीय सम्पर्क
बी-3/44, तीसरा तल, सेक्टर-16,
रोहिणी, दिल्ली-110089
+ 918340436365
sablogmonthly@gmail.com

सदस्यता शुल्क
एक अंक : 50 रुपये–वार्षिक : 600 रुपये
रजिस्टर्ड डाक खर्च समेत 1100 रुपये

सबलोग
खाता संख्या-49480200000045
बैंक ऑफ बड़ौदा,
शाखा-बादली, दिल्ली
IFSC-BARB0TRDBAD
(Fifth Character is Zero)

स्वामी, सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक किशन कालजयी द्वारा बी-3/44, सेक्टर-16, रोहिणी, दिल्ली-110089 से प्रकाशित और लक्ष्मी प्रिण्टर्स, 556 जी.टी. रोड शाहदरा दिल्ली-110032 से मुद्रित।

पत्रिका में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के हैं, उनसे सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

पत्रिका अव्यावसायिक और सभी पद अवैतनिक।

पत्रिका से सम्बन्धित किसी भी विवाद के लिए न्यायक्षेत्र दिल्ली।

संवेद फाउण्डेशन का मासिक प्रकाशन

ग्रामीण विकास में नये प्रयोग

हिवरे बाजार की सीख : **पोपटराव पवार** 3

चक्रीय विकास योजना और ग्रामीण विकास : **मणीन्द्र नाथ ठाकुर** 6

कृषि पारिस्थितिकी, प्रकृति और संस्कृति : **घनश्याम** 9

ग्रामीण भारत के अनादि प्रयोग : **प्रदीप कान्त चौधरी** 11

तरुण भारत संघ और चम्बल का पुनरुद्धार : **पुनीत कुमार** 14

छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा की वैकल्पिक राजनीति : **राधिका कृष्णन** 16

जन भागीदारी की शक्ति : **तन्मय** 19

गोकुल परिवार संस्था का नवाचार : **संजय सज्जन** 22

राहत, रचना और संघर्ष का समन्वय : **शुभा प्रेम** 25

संघर्ष की जमीन से रचना के उगते फूल : **अरविन्द अंजुम** 28

सृजनलोक

छः कविताएँ : **आनन्द बहादुर,** टिप्पणी : **राजीव रंजन गिरि,** रेखांकन : **प्रीतिमा वत्स** 31

विशेष लेख

साहित्य में अश्लीलता परोसने की विकृति : **राकेश भारतीय** 33

राज्य

हरियाणा / स्टार्टअप कल्चर और उद्यमिता विकास : **अजय सिंह** 37

स्तम्भ

चतुर्दिक / महाश्वेता देवी : जीवन और लेखन : **रविभूषण** 39

तीसरी घण्टी / शायद स्वदेश दीपक दर्शकों के बीच मिल जाएँ : **अरविन्द गौड़** से **राजेश कुमार** की बातचीत 44

यत्र-तत्र / पाठ में कविता : **जय प्रकाश** 47

देशान्तर / बलूचिस्तान में आजादी का संघर्ष : **धीरंजन मालवे** 50

परती परिकथा / पश्चिम बंगाल, काँग्रेस और मुसलमान बुद्धिजीवी : **हितेन्द्र पटेल** 53

कविताघर / कविता में आदिवासियों के घर : **प्रियदर्शन** 56

विविध

शोध लेख / दलित साहित्य में अभिव्यक्त स्त्री आत्मकथा : **रूपम कुमारी** 58

सिनेमा / समसामयिकता में ऐतिहासिक सद्भावना : **सफ़दर इमाम कादरी** 61

शहरनामा / दिल्ली का पर्यावरण : **राधेश्याम मंगोलपुरी** 64

लिये लुकाठी हाथ / आम हो गये खास : **नूपुर अशोक** 67

आवरण : **शशिकान्त सिंह**

अगला अंक : हिन्दी पत्रकारिता के दो सौ वर्ष

आवरण कथा

हिवरे बाजार की सीख

पोपटराव पवार

ग्राम सभा, श्रमदान और लोकतान्त्रिक निर्णय प्रक्रिया जैसे साधनों से यह गाँव न केवल अपनी आर्थिक और पर्यावरणीय स्थिति सुधारने में सफल हुआ, बल्कि उसने सामाजिक एकता, शिक्षा, स्वास्थ्य और संस्कृति के क्षेत्र में भी मिसाल कायम की। 2047 के भारत की कल्पना तभी सार्थक होगी जब देश के हजारों गाँव हिवरे बाजार की तरह जागरूक, संगठित और संकल्पित होकर जलवायु परिवर्तन की चुनौती का सामना करेंगे। यह केवल एक मॉडल नहीं, बल्कि एक आन्दोलन है—गाँव को पुनः भारत की आत्मा बनाने का।

लेखक पद्मश्री से सम्मानित हैं तथा आदर्श गाँव संकल्प एवं प्रकल्प समिति, महाराष्ट्र के कार्यकारी अध्यक्ष हैं।
+918271252525
popatrao.pawar@rediffmail.com

भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था सदियों से स्थिर और आत्मनिर्भर रही है, जिसे हमारे पूर्वजों, ऋषियों और किसानों ने अथक परिश्रम और सूझ-बूझ से सँजोया है। भारतीय ग्रामीण संस्कृति उत्सवों और त्योहारों के माध्यम से संचालित होती रही है, जिससे न केवल आर्थिक गतिविधियाँ चलती थीं, बल्कि सामाजिक समरसता भी मजबूत होती थी। कौटिल्य के समय से ही ग्राम पंचायत और गुरुकुल शिक्षा जैसी संस्थाओं ने हमारी ग्रामीण व्यवस्था को स्थिरता और मजबूती प्रदान की। इन संस्थाओं के जरिये गाँवों में निर्णय लेने की प्रक्रिया भी लोकतान्त्रिक और पारदर्शी रही।

लेकिन ब्रिटिश औपनिवेशिक शासनकाल ने हमारी इन व्यवस्थाओं पर गहरा प्रहार किया। हमारी प्राचीन गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली को समाप्त कर दिया गया, जिससे ज्ञान और स्थानीय समझ की पीढ़ी-दर-पीढ़ी होने वाली निरन्तरता टूट गयी। खेती की हमारी पारम्परिक विधियाँ, जो मौसम, नक्षत्रों और स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों की गहरी समझ पर आधारित थीं, उन्हें पिछड़ा और अवैज्ञानिक बताया गया। हमारे पूर्वज जल, जंगल, जमीन को देवता स्वरूप सम्मान देते थे, लेकिन अँग्रेजों ने इसे अन्धविश्वास का नाम देकर नकार दिया। प्रकृति के संरक्षण की हमारी सांस्कृतिक विधियाँ खत्म होने के बाद ग्रामीण व्यवस्था और कृषि दोनों संकट में आ गयीं।

वर्तमान में जलवायु परिवर्तन के चलते यह संकट और गहरा गया है। तापमान में वृद्धि, वर्षा की अनियमितता, सूखा एवं बाढ़ जैसी आपदाओं के चलते कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था का भविष्य और भी जटिल हो गया है। ऐसी स्थिति में अगले 25 वर्षों यानी 2047 तक कृषि और ग्रामीण विकास के लिए नयी सोच, योजनाबद्ध रणनीति और सामूहिकता पर आधारित प्रयास करने की तत्काल आवश्यकता है। हमें अपने इतिहास और संस्कृति के अनुभवों के साथ आधुनिक तकनीक को जोड़कर आगे बढ़ना होगा।

इन तथ्यों के मद्देनजर हमें हिवरे बाजार जैसे सफल उदाहरणों को गम्भीरता से देखना और समझना चाहिए। हिवरे बाजार ने पिछले तीन दशकों में जल संरक्षण, कृषि सुधार, सामाजिक समरसता, लोकतान्त्रिक निर्णय प्रक्रिया तथा पारदर्शी प्रशासन जैसे मूल्यों पर आधारित सफल ग्रामीण विकास का जो उदाहरण प्रस्तुत किया है, वह वर्तमान चुनौतियों के समाधान की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण मॉडल हो सकता है। इस गाँव का अध्ययन इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है कि यहाँ प्रकृति का सम्मान, सामूहिकता की भावना और ग्रामीण नेतृत्व को पुनः स्थापित किया गया है। इन प्रयासों के माध्यम से ही जलवायु परिवर्तन के दौर में ग्रामीण जीवन और कृषि की चुनौतियों को सफलतापूर्वक दूर किया जा सकता है।

जलवायु परिवर्तन के कारण हिवरे बाजार में संकट

जलवायु परिवर्तन आज दुनिया के सामने उपस्थित सबसे गहरी और गम्भीर चुनौतियों में से एक है। कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था इसके प्रभाव से सर्वाधिक प्रभावित होने वाले क्षेत्र हैं। भारत में, जहाँ लगभग 60 प्रतिशत आबादी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है, यह समस्या और भी चिन्ताजनक है। हिवरे बाजार जैसे गाँव भी जलवायु परिवर्तन के कारण गहरे संकट में थे, इसलिए इस गाँव की स्थिति को समझना बेहद जरूरी था।

हिवरे बाजार में जलवायु परिवर्तन के संकट को समझने के लिए पहले की स्थितियों को देखना जरूरी है। 1980 और 1990 के दशक में गाँव गम्भीर जल संकट से जूझ रहा था। वार्षिक वर्षा लगभग 400 से 500 मिलीमीटर तक सीमित हो गयी थी, जो सामान्य वर्षा से लगभग 50 प्रतिशत कम थी। गर्मी के महीनों में तापमान अक्सर 40-45 डिग्री सेल्सियस तक पहुँच जाता था। इन स्थितियों में भूमि तेजी से सूख रही थी और मिट्टी की नमी लगातार घट रही थी। वर्षा का अनियमित होना भी एक बड़ी समस्या थी, जिससे खेती पूरी तरह से मानसून पर निर्भर हो गयी थी।

अधिक गर्मी और कम वर्षा के कारण भूजल स्तर तेजी से नीचे जा रहा था। गाँव का भूजल स्तर 1990 के दशक की शुरुआत तक 120 फीट से अधिक नीचे चला गया था। गाँव के लगभग 85 प्रतिशत कुएँ सूख चुके थे। भूजल की कमी ने न सिर्फ कृषि, बल्कि पशुपालन और सामान्य घरेलू जरूरतों को भी गहरे संकट में डाल दिया था।

ऐसे में गाँव में कृषि उत्पादन में गम्भीर गिरावट आयी। जल-संकट से प्रभावित कृषि भूमि लगभग 75-80 प्रतिशत बंजर होने लगी। फसलों की पैदावार भी 50 प्रतिशत तक घट गयी थी। इसके साथ ही बढ़े हुए तापमान और सूखे के कारण फसलों पर नये प्रकार के रोग और कीट लगने लगे। कृषि उपज की सुरक्षा किसानों के लिए बड़ी समस्या बन गयी थी। पशुपालन भी संकट में था, क्योंकि पानी की कमी और बढ़े हुए तापमान से पशुओं में बीमारी और दूध उत्पादन में भारी गिरावट आयी। इस दौरान दूध का औसत उत्पादन प्रति पशु लगभग 50 प्रतिशत तक कम हो गया था।

इसलिए जलवायु परिवर्तन से पैदा हुई परिस्थितियों को समझना बेहद जरूरी था। आँकड़ों और तथ्यों के जरिये जब गाँववालों को बताया गया कि उनकी आर्थिक कठिनाइयों का सीधा सम्बन्ध जलवायु परिवर्तन से है, तभी वे परिवर्तन के लिए तैयार हुए। उन्होंने समझा कि जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध लड़ाई लड़ने के लिए जल संरक्षण, वृक्षारोपण और टिकाऊ कृषि-पद्धतियाँ अपनाना जरूरी है।

इसलिए यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि हिवरे बाजार की सफलता की शुरुआत जलवायु परिवर्तन के संकट और उससे जुड़े आँकड़ों को समझने और ग्रामीणों तक यह समझ पहुँचाने से हुई थी। इसी समझ ने ग्रामीणों को एकजुट कर सामूहिक प्रयासों की ओर प्रेरित किया। आज हिवरे बाजार का मॉडल जलवायु परिवर्तन से निपटने का एक सफल उदाहरण बन गया है, जो पूरे भारत और विश्व के लिए प्रेरणा स्रोत बन सकता है।

हिवरे बाजार का परिवर्तन : पहले और अब

1990 से पहले हिवरे बाजार की तस्वीर बेहद निराशाजनक थी। यह गाँव अहमदनगर जिले के सबसे पिछड़े और पानी की कमी से ग्रसित गाँवों में एक था। खेती की उपज में लगातार गिरावट हो रही थी, और भूमि का बड़ा हिस्सा अनुपयोगी एवं बंजर पड़ चुका था। गाँव के लगभग 90 प्रतिशत परिवार गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे थे। साल-भर में मुश्किल से एक फसल होती थी, जिसकी पैदावार भी अत्यन्त कम होती थी। सालाना प्रति व्यक्ति औसत आय लगभग 8000 रुपये थी। रोजगार के साधन न होने से नौजवान और पुरुष-वर्ग शहरों की तरफ पलायन कर रहे थे। परिणामस्वरूप गाँव बुजुर्गों, महिलाओं और बच्चों का बसेरा बनता जा रहा था। गाँव में शराब की लत और नशाखोरी व्यापक रूप से फैल गयी थी, जिससे पारिवारिक और सामाजिक विवादों की संख्या भी बढ़ती जा रही थी। शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सामाजिक चेतना के अभाव ने गाँव की तस्वीर को और भी अधिक धुँधला कर दिया था।

ऐसी स्थिति में गाँववालों के आग्रह पर मैंने 1990 में गाँव के प्रशासन की जिम्मेदारी स्वीकार की। पहली ग्राम सभा से शुरू हुआ यह परिवर्तन का अभियान पूरी तरह ग्रामीणों की सहभागिता, लोकतान्त्रिक निर्णय-प्रक्रिया, पारदर्शिता और निरन्तर संवाद पर केन्द्रित था। सबसे पहला कार्य था ग्रामीण एकजुटता और परस्पर विश्वास बहाल करना। नियमित ग्राम सभाओं के आयोजन से गाँव की योजनाओं में सभी की भागीदारी सुनिश्चित हुई।

हमने जल संरक्षण को पहली प्राथमिकता दी। श्रमदान द्वारा गाँव में जलस्रोतों का पुनरुद्धार किया गया। जल संग्रहण के लिए छोटे-बड़े तालाब, वाटरशेड संरचनाएँ, बाँध और चेक डैम का निर्माण किया गया। सामूहिक प्रयासों से लगभग 40 हजार से अधिक जल संरचनाएँ स्थापित हुईं। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप, गाँव का भूजल स्तर, जो 1990 में लगभग 120 फीट नीचे चला गया था, आज बढ़कर मात्र 20 से 30 फीट तक आ गया है। गाँव में पानी की उपलब्धता अब साल-भर बनी रहती है, जिससे खेती में क्रान्तिकारी बदलाव आया।

पर्यावरण की बेहतरी के लिए हमने व्यापक स्तर पर वृक्षारोपण किया। अब तक लगभग दस लाख से अधिक पेड़ लगाये जा चुके हैं, जो वातावरण को हरा-भरा बनाये रखने में मददगार हैं। इससे वर्षा का स्तर भी सुधरा है। कृषि-क्षेत्र में मिश्रित खेती, जैविक खेती तथा उन्नत तकनीकें अपनाकर पैदावार में अभूतपूर्व बढ़ोत्तरी हुई। पहले जहाँ एक साल में मुश्किल से एक फसल होती थी, आज गाँव के किसान दो से तीन फसलें आसानी से ले पा रहे हैं। दूध उत्पादन, फल उत्पादन और सब्जी उत्पादन ने गाँव की अर्थव्यवस्था को नयी मजबूती दी है।

हमने सामाजिक स्तर पर शराबबन्दी और नशामुक्ति अभियान को सफलतापूर्वक लागू किया, जिसके परिणामस्वरूप अपराध और सामाजिक विवाद नाटकीय रूप से कम हो गये। पहले गाँव के लगभग 70 प्रतिशत पुरुष शराब का सेवन करते थे, जो अब

पूरी तरह से शराब छोड़ चुके हैं। शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में सुधार के लिए स्कूल और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों का कायाकल्प किया गया। इन प्रयासों से आज गाँव का साक्षरता दर 30 प्रतिशत से बढ़कर लगभग 95 प्रतिशत तक पहुँच गया है।

इन बदलावों के परिणामस्वरूप आज गाँव की औसत वार्षिक प्रति व्यक्ति आय लगभग 8000 रुपये से बढ़कर करीब दो लाख रुपये हो गयी है। गाँव के 90 प्रतिशत परिवार जो कभी गरीबी रेखा से नीचे थे, आज गरीबी रेखा से ऊपर उठ चुके हैं। गाँव में रोजगार के अवसर लगातार बढ़ रहे हैं, जिससे न केवल पलायन रुका है बल्कि जो परिवार पहले पलायन कर गये थे, वे भी वापस लौट रहे हैं। 1990 में जहाँ गाँव की कुल कृषि भूमि में से मात्र 15 प्रतिशत सिंचित थी, आज यह लगभग 95 प्रतिशत तक पहुँच गयी है।

हिवरे बाजार के सफल विकास मॉडल की ख्याति पूरे देश में फैली हुई है। अब तक लगभग 5 लाख से अधिक लोग देश-विदेश से हमारे गाँव का अध्ययन करने और सीखने आ चुके हैं। भारत सरकार तथा विभिन्न राष्ट्रीय-अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं ने भी गाँव को सम्मानित किया है। गाँव को कई पुरस्कार मिले हैं जैसे कि राष्ट्रीय जल पुरस्कार, निर्मल ग्राम पुरस्कार, आदर्श ग्राम पुरस्कार और राज्य सरकार के अनेक सम्मान। मुझे मिला पद्मश्री जैसा व्यक्तिगत सम्मान भी हिवरे बाजार के समस्त ग्रामीणों का ही सम्मान माना जाता है।

संक्षेप में कहा जाये तो हिवरे बाजार का यह बदलाव ग्रामीणों की एकजुटता, सामूहिक निर्णय, पारदर्शी प्रशासन, निरन्तर संवाद और नेतृत्व के प्रति भरोसे का परिणाम है। सामूहिकता की यही भावना हिवरे बाजार को ग्रामीण विकास के एक आदर्श मॉडल के रूप में स्थापित करती है, जिससे आज देश के अन्य गाँव भी प्रेरणा ले रहे हैं।

गाँव में रामराज्य स्थापित करने की हमारी कोशिश

1990 में, गाँववालों के अनुरोध पर मैंने हिवरे बाजार गाँव की जिम्मेदारी ली और पहली ग्राम सभा का आयोजन किया। शुरुआत श्रमदान और ग्रामीणों की भागीदारी से हुई। प्राथमिक स्कूल, मन्दिर, व्यायामशाला, ग्राम पंचायत भवन जैसी जगहों को पुनर्जीवित किया गया। गाँव की सफलता का आधार था गाँव के लोगों का सामूहिक प्रयास और पारदर्शी प्रशासन। हमने हर महीने बचत और खर्च को बोर्ड पर सार्वजनिक किया, जिससे गाँव में विश्वास बढ़ा। साल के अन्त में ग्राम सभा में पूरा हिसाब रखा जाता था और अगले साल की योजनाएँ बनायी जाती थीं।

इस प्रक्रिया में गाँव के भीतर एक मजबूत सामूहिक चेतना विकसित हुई, जिसके पीछे सबसे प्रमुख भूमिका ग्रामीणों के बीच आपसी संवाद, पारदर्शिता और निर्णय-प्रक्रिया में लोकतान्त्रिक सहभागिता की थी। हर महीने नियमित ग्राम सभा के आयोजन और सभी निर्णयों को खुली बैठक में चर्चा द्वारा स्वीकृति मिलने के कारण ग्रामीणों का नेतृत्व और शासन-प्रशासन के प्रति भरोसा मजबूत हुआ। छोटी-से-छोटी योजना से लेकर बड़े आर्थिक निर्णय तक ग्राम सभा में खुले तौर पर चर्चा होती थी, जिससे ग्रामीण अपनी आवाज और विचारों को सुने जाने का विश्वास करते थे। इससे एक साझेदारी और जिम्मेदारी की भावना विकसित हुई।

पारदर्शिता और जवाबदेही के सिद्धान्त को व्यावहारिक तौर पर लागू करने के कारण गाँववालों के बीच कोई सन्देह या मतभेद पनपने नहीं दिया गया। किसी भी योजना, बजट या खर्च को गुप्त नहीं रखा गया। इसके अतिरिक्त, हमने गाँव के युवाओं, महिलाओं और बुजुर्गों की सहभागिता को समान रूप से महत्त्व दिया, जिससे सभी को लगा कि उनका योगदान मूल्यवान है। ग्रामीण नेतृत्व के विकास और निर्णय-प्रक्रिया में बराबर भागीदारी के अवसरों ने गाँववालों के भीतर 'गाँव मेरा, विकास मेरा' की भावना जगायी। यही कारण था कि हिवरे बाजार में पिछले तीस वर्षों में स्थायी सामूहिकता स्थापित और बरकरार रही।

2047 तक की योजना क्या हो?

अगले 25 वर्षों की योजना के लिए हमें सबसे पहले किसानों, वैज्ञानिकों, विशेषज्ञों और प्रशासनिक अधिकारियों के बीच लगातार संवाद स्थापित करना होगा। इसके साथ-साथ हमें पारम्परिक ज्ञान और आधुनिक तकनीकों के बीच तालमेल बैठाना होगा। गाँवों में छोटे जलाशय, तालाब, सिंचाई की पारम्परिक विधियाँ पुनः शुरू करनी होंगी। सामुदायिक स्तर पर वर्षा जल संचय के नये तरीकों को अपनाना होगा।

जैविक खेती, फसल चक्र, मिश्रित खेती और पशुपालन को प्रोत्साहन देकर मिट्टी की गुणवत्ता को फिर से बेहतर बनाया जा सकता है। इसके अलावा स्थानीय स्तर पर कुटीर उद्योग और ग्रामोद्योग स्थापित करने होंगे, ताकि गाँव आत्मनिर्भर बन सकें। ग्राम सभाओं को और मजबूत बनाकर पारदर्शी प्रशासन व्यवस्था स्थापित करनी होगी, जिससे ग्रामीण खुद अपनी समस्याओं को हल कर सकें।

हम अगर इन कदमों को अपनाते हैं, तो 2047 तक न सिर्फ ग्रामीण भारत की नयी तस्वीर उभरकर सामने आएगी बल्कि जलवायु परिवर्तन के संकट से लड़ने में भी सक्षम होंगे। यही वह रास्ता है, जो गाँवों को स्थिरता, समृद्धि और खुशहाली की तरफ ले जाएगा।

निष्कर्ष

हिवरे बाजार की कहानी केवल एक गाँव के विकास की नहीं, बल्कि सामूहिक चेतना, पारदर्शिता, और स्थानीय नेतृत्व की शक्ति की प्रेरणादायक मिसाल है। यह उदाहरण दिखाता है कि जब ग्रामीण समाज जलवायु परिवर्तन जैसी जटिल समस्याओं की गहराई को समझता है और उनके समाधान के लिए मिलकर कार्य करता है, तो असम्भव दिखने वाले लक्ष्य भी हासिल किये जा सकते हैं। जलवायु संकट के समय में जहाँ खेती और ग्रामीण जीवन संकटग्रस्त हो रहे हैं, वहीं हिवरे बाजार ने दिखाया कि परम्परा और आधुनिकता का समन्वय, पर्यावरण के प्रति सम्मान, और संसाधनों का न्यायपूर्ण उपयोग ही टिकाऊ विकास की कुंजी है। ■

चक्रीय विकास योजना और ग्रामीण विकास

मणीन्द्र नाथ ठाकुर

'भारत गाँवों का देश है' यह सिर्फ एक जुमला नहीं, बल्कि हमारी सभ्यता और संस्कृति का रूपक भी है। गाँधी गाँव में जन्मे नहीं थे, लेकिन उन्हें भारत की आत्मा का साक्षात्कार तभी हुआ जब उन्होंने पूरे देश की यात्रा की। यह सच है कि भारत में शहर आधुनिकता से पहले भी थे, लेकिन वे राष्ट्रीय अस्मिता के केन्द्र नहीं थे। औपनिवेशिक आधुनिकता ने भारत को एक नया नक्शा दिया— उस पर शहरी संस्कृति थोप दी। गाँवों का शहरों में बदल जाना ही 'विकास' का नाम बन गया।

लेखक समाजशास्त्री और जे.एन.यू. में प्राध्यापक हैं।
+919968406430
manindrat@gmail.com

अमेरिका में रह रहे मेरे एक मित्र ने अपनी माँ को कुछ दिनों के लिए दिल्ली में रखा। माता जी जिस मोहल्ले में रह रही थीं, वहाँ के लोगों से उनका अपनापन बहुत बढ़ गया। कुछ दिनों के बाद मित्र अपनी माँ को वापस ले जाने का सोच ही रहे थे कि माँ की मृत्यु हो गयी। जाते समय नम आँखों से मित्र ने कहा, ''माँ तो चली गयीं, लेकिन मैं इस मोहल्ले के लोगों के प्यार को कैसे भूलूँ। इतना अपनापन अमेरिका में कहीं नहीं।'' यह वही ग्रामीण संस्कृति है, जो अब भी हमारे शहरी जीवन के बीच कहीं जिन्दा है।

सवाल है कि इस संस्कृति में बदलाव से जो पीड़ा उपज रही है, उसका क्या निदान है? क्या यह सम्भव है कि आधुनिकता और पुरानी संस्कृति के बीच कोई ऐसा मेल-जोल बने जिससे विकास हो, लेकिन संस्कृति न बिखरे? इन्हीं सवालों से जूझते हुए कुछ लोगों ने 'भारत रूरल रिवाइवल इनिशिएटिव' की शुरुआत की है। इसका उद्देश्य है–गाँवों पर विचार करना, वहाँ चल रहे प्रयासों को सामने लाना और देश-भर में साझा करना। भारत के गाँवों में ग्रामीण संस्कृति का पुनरुत्थान– अर्थात परम्परागत सामुदायिक जीवन-मूल्यों, आत्मनिर्भरता और सतत विकास को फिर से जीवन्त करने–के अनेक प्रयोग हुए हैं। ये प्रयोग आधुनिक विकास की चुनौतियों के बीच ऐसी राह सुझाते हैं, जो न केवल आर्थिक समृद्धि लाती है, बल्कि सांस्कृतिक आत्मा को भी अक्षुण्ण रखती है। इस क्रम में तीन उल्लेखनीय नवाचार विशेष रूप से सामने आते हैं।

ऐसा ही एक प्रयास झारखण्ड के पलामू जिले में मृदा वैज्ञानिक पद्मश्री पी.आर. मिश्र के नेतृत्व में शुरू की गयी चक्रीय विकास योजना, जिसने गाँधीवादी सोच, आदिवासी ज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को मिलाकर बंजर जमीनों को उपजाऊ बना दिया और सामुदायिक सहयोग से ग्रामीण जीवन में आत्मनिर्भरता लायी। इसकी तुलना स्पेन के मोंड्रैगॉन सहकारी आन्दोलन से की जा सकती है, जिसने यह दिखाया कि ग्रामीण और कस्बाई क्षेत्र भी आर्थिक रूप से सम्पन्न हो सकते हैं यदि श्रमिकों को स्वामित्व, निर्णय प्रक्रिया और लाभ में समान भागीदारी दी जाये। इसी तरह का एक प्रयोग छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा भी है, जो शंकर गुहा नियोगी के नेतृत्व में केवल मजदूर अधिकारों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि शिक्षा, स्वास्थ्य, शराबबन्दी और सांस्कृतिक पुनरुत्थान जैसे विषयों को अपने आन्दोलन में समेटते हुए श्रमिक चेतना को व्यापक सामाजिक बदलाव का माध्यम बना। ऐसे प्रयास हमें यह सिखाते हैं कि स्थानीय सहभागिता, सामूहिक स्वामित्व और सांस्कृतिक जड़ों से जुड़कर ही ग्रामीण भारत को नयी ऊर्जा दी जा सकती है।

पद्मश्री पी.आर. मिश्र ने रिटायरमेण्ट के बाद जीवन की दूसरी पारी शुरू की, तो उनके

सामने एक विचलित कर देने वाला दृश्य था–सूखा, पलायन, बंजर जमीन और जंगल की कटायी। उन्होंने देखा कि लोग लकड़ी बेचने के लिए जंगल काट रहे हैं, खेत बंजर पड़े हैं और युवा पलायन कर रहे हैं। पर मिश्र जी ने इसे एक अवसर की तरह देखा। एक वृद्ध महिला को ट्रेन में लकड़ी के गट्ठर के साथ चढ़ने के प्रयास में फिसलते और फिर बिखरे हुए गट्ठर के पास बैठकर विलाप करते देखकर बेचैन हो गये और फिर तय किया कि कुछ नया प्रयोग करना चाहिए।

उनकी विचारधारा गाँधीवादी थी–सादा जीवन, पर्यावरण से सामंजस्य और समुदाय की शक्ति में विश्वास। उन्होंने महसूस किया कि प्रकृति ही सबसे बड़ा शिक्षक है और आदिवासी समुदायों का ज्ञान–जिसे अक्सर अवैज्ञानिक समझा जाता है–वास्तव में अत्यन्त व्यावहारिक और गहराई से जुड़ा हुआ है। यह सब कुछ उन्होंने चण्डीगढ़ के सुखना झील को बचाने के प्रयास में सुखो माझी गाँव के लोगों से सीखा था।

इसी विचार से 'चक्रीय विकास योजना' की नींव रखी गयी। इसमें गाँव को एक इकाई के रूप में लिया गया और वहाँ के सभी परिवारों को इस योजना में भागीदार बनाया गया। प्रत्येक गाँव में एक 'चक्रीय विकास विद्यालय' बनाया गया, जिसमें तीन प्रमुख कोष बनाये गये–ग्राम विकास कोष, परिवार कोष और पुनर्निवेश कोष। गाँव की बंजर जमीन पर सामूहिक श्रम से वृक्षारोपण, जल-संरक्षण और बहुफसली खेती की गयी।

इस योजना की खासियत थी–वन, फल, अनाज, चारा और रेशा (फाइबर) को एक चक्रीय प्रणाली में लगाना, जिससे भूमि की उत्पादकता भी बढ़े और पर्यावरणीय सन्तुलन भी बना रहे। गाँव के प्रत्येक व्यक्ति को इस योजना से कुछ-न-कुछ लाभ मिला–चाहे वह भूमिहीन मजदूर हो या जमीन का मालिक।

इस परियोजना की सफलता का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि जहाँ कभी एक फसल मुश्किल से होती थी, वहाँ अब साल में दो से तीन फसलें होने लगीं। लोगों का पलायन बन्द हुआ, गाँव में आपसी सम्बन्ध मजबूत हुए और पर्यावरणीय समृद्धि ने आर्थिक मजबूती को जन्म दिया। यह प्रयोग दिखाता है कि गाँधी के 'ग्राम स्वराज' की अवधारणा आज भी प्रासंगिक है–जहाँ आत्मनिर्भर गाँव ही सशक्त राष्ट्र की नींव हैं।

चक्रिय विकास योजना (सीवीपी) लगभग 40 गाँवों (5 प्रखण्डों) में काम शुरू किया, जिससे लगभग 2,000 परिवार जुड़े। उन्होंने प्रत्येक गाँव (औसतन 100 परिवार, 200-300 एकड़ क्षेत्रफल) को एक इकाई के रूप में लिया और गाँववासियों को एक संगठन में संगठित किया। इस संगठन को चक्रिय विकास विद्यालय का नाम दिया गया, जिसमें हर परिवार से एक प्रतिनिधि सदस्य था। विद्यालय का काम सामूहिक फैसले लेना, लाभों का बँटवारा देखना और उपयुक्त उपसमितियाँ बनाकर काम को बाँटना था।प्रमुख उपसमितियाँ–सामाजिक ऑडिट समिति, निगरानी (विजिलेंस) समिति, लेखा समिति, महिला मण्डल आदि बनायी गयीं। साथ ही तीन कोष बनाये गये–1. ग्राम विकास कोष, 2. विद्यार्थी/परिवार कोष, 3. भूस्वामी शेयर कोष।

ग्रामीणों को प्रोत्साहित किया गया कि वे अपने बंजर पड़े खेतों की मेड़ व किनारों पर उपयोगी पेड़ लगाये। नर्सरियाँ स्थापित कर निःशुल्क पौधे बाँटे गये। गाँववालों ने जंगल काटने की बजाय पेड़ उगाने को रोजगार का साधन बनाया, जिससे कुछ वर्षों में ही सूखे पहाड़ फिर से हरे होने लगे। जिन भूमिहीनों का जमीन पर कोई अधिकार नहीं था, उन्हें सामुदायिक खाली भूमि पर पेड़ लगाने व संरक्षित करने का जिम्मा देकर भविष्य में पेड़ों से आमदनी में हिस्सेदारी दी गयी। इसे 'सामाजिक बाड़ेबन्दी' (सोशल फेंसिंग) कहा गया–मतलब पूरे गाँव ने मिलकर नंगे पहाड़ की रक्षा की और पेड़ बड़े होने तक कोई जानवर या व्यक्ति क्षति न पहुँचाए, इसका ख्याल रखा। परिणामस्वरूप गैर-कानूनी कटाई रुक गयी और 'लकड़हारे, जंगल रक्षक बन गये'।

वर्षा के पानी को संचित करने के लिए कम लागत से छोटे-छोटे तालाब, कुएँ और पहाड़ी नालों पर चेकडैम बनवाये गये। इससे भूजल स्तर ऊपर आया और सूखे में भी 2-3 फसल लेना सम्भव हुआ। सिर्फ ₹15,000 की लागत से एक गाँव (भूसादिया) में आठ जगह नाला बाँधने से पहले जहाँ साल में एक ही फसल होती थी, वहाँ पानी रुकने के बाद दो-तीन फसलें उगने लगीं।

किसानों को पारम्परिक एकफसली पैटर्न छोड़कर बहुफसली प्रणाली अपनाने को कहा गया। 'चक्रीय विकास' का तात्पर्य था कि भूमि का एक हिस्सा किसी वर्ष वन लगाये जाने के लिए छोड़ा जाये, दूसरा हिस्सा बहुवर्षीय फलदार पेड़ों के लिए, तीसरा हिस्सा अनाज/सब्जी जैसी मौसमी फसलों के लिए और चौथा हिस्सा चारा के लिए–और हर साल दो साल में इन भूमियों के उपयोग को चक्र में घुमाया जाये ताकि वन, फल, अन्न, चारा सब चरणबद्ध तरीके से मिलते रहें। उनकी टीम ने तकनीकी मार्गदर्शन दिया कि कौन से पेड़/फसल एक साथ या क्रमवार लगाने से भूमि की उर्वरता बढ़ेगी। उदाहरण के लिए, पलामू के एक गाँव चेंचानी में आदिवासी किसान मंगल उराँव ने चक्रिय विकास अपनाकर अपने खेत में शीशम व सागवान के 300 पेड़ लगाये और बीच की जमीन में अनाज उगाना जारी रखा; कुछ सालों बाद इन पेड़ों में से कुछ को बेचकर उसने अपनी तीन बेटियों की शादी का खर्च सहजता से उठा लिया। इस तरह पेड़ किसानों के 'हरे-भरे बैंक' बन गये–आवश्यकता पड़ने पर पेड़ काटकर धन ले आये और तुरन्त नये पौधे लगा दिये।

चक्रिय विकास विद्यालय द्वारा निश्चित अनुपात में फसलों/वनोपज से हुए कुल उत्पादन का बँटवारा किया गया। 30% ग्राम विकास कोष में गया जिससे सामूहिक कार्य (जैसे स्कूल, आपातकालीन मदद) हो सके; 30% भूमिधर किसानों को गया (उनकी जमीन का उपयोग होने के बदले); 30% ग्रामीण परिवार/छात्र कोष में गया जिसे परिवारों की जरूरत (शिक्षा, स्वास्थ्य आदि) पर खर्च किया गया; तथा 10% पुनर्निवेश के लिए रखे गये। इस पारदर्शी बँटवारे से सबको लगा कि मेहनत का फल बराबर मिल रहा है। भूमिहीनों को मजदूरी व साझा फसल से अन्न मिला, भूस्वामियों को पहले से कई गुना उपज मिली, महिलाओं-युवाओं को भी योगदान के अनुसार आर्थिक हिस्सा मिला।

इस सामूहिक मॉडल के चलते पलामू के इन गाँवों में तेजी से परिवर्तन देखा गया। ऊसर पड़े सैकड़ों हेक्टेयर बंजर भूमि पर पेड़ों का जंगल खड़ा हो गया जिससे केवल खड़े पेड़ों का मूल्य ₹39 करोड़ आँका गया। जल-